भगवत् कृपा

साकार प्रगट ब्रह्म को जो पहचाने, वो परम् को पाये

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली द्विमासिक सत्संग पत्रिका

निजात्मानं ब्रह्मरूपं देहत्रयविलक्षणम् । विभाव्य तेन कर्तव्या भक्तिः कृष्णस्य सर्वदा ॥ शिक्षापत्री, ११६

वर्ष 30 अंक : 4	25.7.2007 बुधवार (जुलाई - अगस्त)	प्रति अंक : 10.00

गुरुचरण में शीश नामी दीनता उच्चारिये...

२९ जुलाई, रविवार को **'गुरुपूर्णिमा'** का पवित्र शुभ दिन नज़दीक आ रहा है। भारत के कोने-कोने में यह पर्व शिष्यों द्वारा मनाया जाएगा। इस दिन शिष्य गुरु द्वारा दिए गए ज्ञान, निःस्वार्थ प्रेम का यत्किंचित ऋण अदा करने अत्यधिक निष्ठा से 'गुरुपूजन' करता है।

दरअसल गुरु की हर एक आज्ञा हमारी वासना, अहंकार, स्वभाव, वृत्ति के दोषों को टालने ही होती है। **उसकी दया हमारी देह पर नहीं, बल्कि जीव पर यूं होती है** कि इसे मेरा संबंध हुआ तो किस तरह जल्दी से जल्दी यह ब्रह्मरुप होकर परब्रह्म में जुड़ जाए और जीतेजी परम सुख का भोक्ता बने।

जगत में माँ जैसे अपने बच्चे को अग्नि में हाथ डालने से, चाकू हाथ में लेने से या कोई नुकीला खिलौना खेलने से बचाती-करती है, वैसे ही सच्चा गुरु हमें मन-स्वभाव के दायरों में फंसने से बचाता रहता है। कभी प्यार देकर, कभी डाँट से, कभी कड़ी प्रकृति ग्रहण करके, कभी हमारे लौकिक-अलौकिक मनोरथ तोड़ कर और आख़िरकार... अपनी देह पर बीमारी लेकर भी हमारे जीव के रोग टालना ही उसका एकमात्र उद्यम होता है।

गुरु द्रोणाचार्य ने एकलव्य को जातिभेद की आड़ में बाणविद्या सिखाने की मना कर दी थी। गुरु द्रोणाचार्य ने देखा होगा कि – दासीपुत्र को कोई राज्य तो करना नहीं होता, सो इसका बाणविद्या सीखना निरर्थक है... पर, बलिष्ठ जीव है... उसे अध्यात्म ज्ञान प्राप्त करना चाहिए।
फिर भी, एकलव्य ने गुरु द्रोणाचार्य को
अंतर्यामी, सर्वज्ञ व निर्दोष जान कर,
उनकी मूर्ति बना कर उसकी आराधना करके
प्रगट गुरु को मूर्ति में **प्रत्यक्ष** किया
और
अपने आप ही बाणविद्या सीख ली।
बाणविद्या में इतनी अधिक निपुणता पाई कि भौंकते कुत्ते का बाणों से मुँह भर कर उसका भौंकना बंद कर दे! यह बात का पता चलने पर गुरु द्रोणाचार्य ने उससे गुरुदक्षिणा में **'दाएं हाथ का अंगूठा'** ही मांग लिया था; जिसके बिना कोई बाण चला ही नहीं सकता। बाह्यदृष्टि से देखें तो यहाँ गुरु द्रोणाचार्य पक्षपाती दिखाई पड़ेंगे कि अपने प्रिय शिष्य अर्जुन को ही श्रेष्ठ धनुर्धारी बनाए रखने उन्होंने एकलव्य से ऐसी गुरुदक्षिणा माँगी।

लेकिन, इसकी गहराई में झाँक कर उसका रहस्य-मर्म तो अति उच्च कक्षा पर पहुँचे अति बड़े पुरुष ही बता

सकते हैं। गुणातीत स्वरूप प.पू. पप्पाजी ने गुरु द्रोणाचार्य द्वारा एकलव्य का अंगूठा मांगने के पीछे जो रहस्य समझाया, वह सच में कल्पनातीत ही है। उन्होंने बताया कि – दरअसल गुरु द्रोणाचार्य नहीं चाहते थे कि इतना बलवान चैतन्य जो कि उन्हें (प्रगट गुरु को) प्रत्यक्ष करके श्रेष्ठ धनुर्धारी हुआ; वह **'श्रेष्ठ धनुर्धारी'** होने के गर्व में – अस्मिता में ही झूलता रहे! सो, उसका वह 'गर्व' टिक ही ना पाए, इस हेतु द्रोणाचार्य ने एकलव्य से गुरुदक्षिणा के रूप में दाएं हाथ का अंगूठा ही माँग लिया! एकलव्य भी सच्चा साधक था, सो-फट से अंगूठा काट कर दे भी दिया!!

इस प्रसंग की सभी यूं ही परिभाषा करते आए हैं कि ओहो! एकलव्य कितना महान? कैसा अद्‌भुत समर्पण! वगैरह... पर दरअसल तो गुरु की भी शिष्य के चैतन्य पर अनहद्-कृपा ही कही जाए कि इस तरह उसकी महत्त्वाकांक्षा को चूर-चूर करके गुरु ने उसकी आत्मा की रक्षा कर ली!

सच्चा गुणातीत गुरु ऐसे शिष्य को महत्वाकांक्षा व अपनी अस्मिता के पड़ावों पर राचने नहीं देता, पर वहाँ से जबरन निकाल कर परम सुख की भूमिका में वे ले जाना चाहते हैं और यह है – गुरु का ऐसे शिष्य के प्रति सच्चा प्रेम!

ऐसी अद्‌भुत परिभाषा प.पू. पप्पाजी ने खूब सरलता से स्पष्ट कर दी। स्वामी की बातों में भी लिखा है कि – हम मानते हैं कि हमें सत्पुरुष से लगाव है, दरअसल ऐसे संत को हम से कई गुणा अधिक लगाव है... पर **वह लगाव हमारे जीव पर है!**

और... हमारे भाग्य का तो पार ही नहीं कि हमारे 'गुरु' ने तो हमें ढूंढ-ढूंढ कर सामने से ग्रहण किया। इतना ही नहीं, हमारे बिना कहे उन्होंने हमारे इस लोक के और परलोक के योग-क्षेम की जिम्मेदारी अपने सिर ले ली।

कैसी विशाल उदात्त योजना लेकर श्रीजी महाराज स्वयं धरती पर आए और साथ ही साथ ऐसी गुणातीत परंपरा पृथ्वी पर अपने गुणातीत स्वरूपों के रूप में अखंडित रख दी! प.पू. काकाजी, प.पू. पप्पाजी, प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी, प.पू. अक्षरविहारीस्वामिजी, प.पू. साहेब, प.पू. दिनकरभाई जैसे स्वरूपों ने तो हमें आत्यंतिक कल्याण मौज में बख़्शिश दे दिया... हम विचारें कि हमने क्या साधन किया? क्या तपस्या करी?

और... वे कैसे उद्दात्त? बस जाने-अनजाने भी मेरी दृष्टि में तुम आए? मेरे साधु की दृष्टि में आए? मेरे सत्संगी के संबंध से आए? उसके घर का भोजन खाया, पानी पीया? बस इतना ही संबंध; तुम कल्याण के अधिकारी!

हमें अतिशय प्रेम देकर हम में प्रभु पाने की गरज व प्रभु के रास्ते पर चलने की पात्रता उन्होंने ही कृपा करके जगा दी और हमारी चैतन्यशुद्धि के लिए अनहद् परिश्रम कर रहे हैं। पर, **क्या हम अपना कुछ भी प्यारा रखे बिना उन्हें साथ देने - अनंत जन्मों से प्यारी हमारी ग़फ़लत व जड़ता को छोड़ कर उन्हें ही राजी करने की एकमात्र तमन्ना रखते हैं?** हम अपने भीतर झांके कि हम ऐसी चाहना-अपेक्षा जरुर रखते हैं कि गुरु हमारी तारीफ़ करें, गुरु हमें अपना खूब निजी मानें, गुरु हमारा हर प्रकार से ध्यान रखते रहें, गुरु के दिल में हमारा पहला स्थान हो।

पर, हम विचारें कि क्या हम **गुरु को** सच में –

अंतर्यामी व सर्वज्ञ मानते हैं?

निर्दोष मानते हैं?

प्रसंग पर कर्ता-हर्ता, प्रेरक, नियंता मानते हैं?

हमेशा उनकी सर्वोपरि सत्ता का स्वीकार करते हैं?

हम उनके हर चरित्र को दिव्य मानते हैं?

उनकी सैकण्ड-सैकण्ड की क्रिया
हमारी चेतना की प्रगति के लिए ही है, ऐसा मानते हैं?

उनकी हर क्रिया हमें हितकारी, कल्याणकारी लगती है?

उनकी स्मृति में निरंतर लय और लीन रहते हैं?
संबंध वाले मुक्तों में उनका दर्शन करते हैं?
हमारे 'स्व' को विलीन करने की तैयारी रखते हैं?
संत को ही जीवन के केन्द्र में रख कर जीने की ओर हमारी सतत् निगाह है?
संत द्वारा कई बार सचेत करने पर भी,
यहां तक कि डाँट कर वे बुरे लगते हुए भी,
संबंध वाले मुक्तों की झंझट में पड़ने का स्वभाव हम छोड़ पाए हैं क्या?

निचोड़ रूप कहें तो आध्यात्मिक प्रगति करने की ओर हमने निशान साधा है क्या?

दूसरी ओर हमारे प्यारे प्रभु प.पू. काकाजी के प्रसादीरूप प्रश्नों की गहराई को भी निहारें जो कि भजन की निम्न पंक्तियों में निहित है –

स्त्री पुरुष भाव क्या अंतर से है टल गया?
उत्तर दो, उत्तर दो
ब्रह्मरूप क्या हम हो गए, जीवभाव टल गया?
उत्तर दो, उत्तर दो
योगी बापा ने जिस हेतु हमें दूर किया,
क्या हमने उस निशान को है हाँसिल किया?
क्या मन के राज्य को हमने सदंतर छोड़ दिया?
उत्तर दो, उत्तर दो
क्या सद्‌गुरुराज्य में हमने प्रवेश किया?
उत्तर दो, उत्तर दो
भावात्मक एकता के लिए जो बलिदान दिया...
काकाजी, हम कहीं तेरा निशान ना चूकें, तेरा निशान कभी ना चूकें....

पर, 'मन' का स्वभाव ऐसा है कि इतनी भव्य प्राप्ति होते हुए भी एवं सच्चे सुख, शांति, आनंद का अनुभव-स्वाद चखने के बावजूद भी कुरेद-कुरेद कर वह दुःख खड़े कर ही लेता है। उदासी, विक्षेप, क्षोभ में हमें खींच ले जाने 'मन की माया' हमेशा खूब तत्पर रहती है। सो, **अब इस मन को गुरुचरणों में समर्पित करना है** – जिससे कि हम कभी सत्पुरुष से दूर ना हों।

प्रत्यक्ष स्वरूप के प्रति **'निर्दोषभाव'** और उसके संबंध वाले मुक्तों के प्रति **'सुहृद्‌भाव'** से जीवन जीते-जीते विलीन हो जाना – यह है गुरु को राजी करने की चाबी-करामात! और... उनकी अनुवृत्ति में **'करिष्ये वचनं तव'** की भावना से समर्पित होने-टोटल खो जाने ही आइए –

गुरुपूर्णिमा और साथ ही **२८ अगस्त, मंगलवार** को आ रहे **'रक्षाबंधन'** के पवित्र अवसर पर प.पू. काकाजी महाराज द्वारा १९७१ में लिखे गए सद्‌विचार के एक-एक शब्द की गहराई को केवल समझें ही नहीं, बल्कि जीव में धारने कृतनिश्चयी बनें...

आध्यात्मिक विकास में
मूल अविद्या का दिव्यता में परिवर्तित होने तक
कई प्रकार के तूफान-मुश्किलें-स्खलन (पतन) बार-बार हुआ ही करते हैं।
तत्त्वों के शुद्धिकरण के लिए
एवं
कर्मों की परिपक्वता के कारण रसरूप हुए स्वभाव को
जड़ से उखाड़ देने - निर्मूल करने के लिए यह अनिवार्य है।
सच्चा भजन, सेवा या बड़े पुरुष की कृपा हो तभी ऐसी परेशानी-उलझन-अवरोधों की शुरुआत होती है।
तब भी भीतर ही भीतर साधक को ख्याल तो रहता है कि (यह सब) मेरी भलाई के लिए ही है।
हाँ,

ऐसे समय में भीतर में शांति अखंड बनी रहे उसके लिए –
धैर्य पकड़ कर भजन करना बहुत कठिन – मुश्किल होता है - अशक्य सा बन जाता है।
इसे आसान और सुगम बनाने के लिए
या तो
ऐसे राजमार्ग पर ही हमारा विकास - हमारी प्रगति निरंतर होती रहे
और
पल - पल की ऐसी हर एक परिस्थिति में
बाहर के महाप्रवाहों (माहौल) या व्यक्तियों के संपर्क में आने पर भी
सहज ही ऐसी समता और संवादिता बनी रहे
और
अंतःकरण को अखंड शांति, सुख और आनंद मिलता रहे उसके लिए –
गुणातीत ज्ञान के नवनीत के मुताबिक भजन व सेवा किया करें
एवं
संत की कृपा दृष्टि वाले सत्संगियों के संग में
समझदारी से '**कसनी की सेवा - भक्ति**' की आदत डालें - ऐसा रवैया अपनाएँ तो –
इस **अतिशय सेवारूपी महासत्कर्म के फलस्वरूप**
ऐसी मुश्किलें, तूफान या स्खलन हमें स्पर्श नहीं कर पाएंगे।
प्रभु या हमारे गुरु ही हमारे लिए (ऐसे) संजोग खड़े करके उसके लिए हमें बल देकर आनंदपूर्वक (हँसते - खेलते) आगे ले जाएंगे।
बड़े पुरुष - संत को मन समर्पित करके केवल उनकी प्रसन्नता के लिए
ऐसी कसनी की भक्ति को - ऐसी दिव्यदृष्टि को सभी सहज प्राप्त करें यही प्रार्थना!

– प.पू. काकाजी महाराज, १९७१

✡✡✡

शाश्वत् स्वरूप प्रत्यक्ष गुरुहरि परम पूज्य पप्पाजी के प्राकट्य पर्व पर...

पहली सितंबर १९१६ के महामंगलकारी दिन अनंत जीवों के कल्याण के लिए **गुरुहरि प.पू. पप्पाजी का धरातल पर प्राकट्य**; यानि – गुणातीत समाज के लिए अखंड सौभाग्य का दिन...

प.पू. पप्पाजी यानि – गुरुहरि योगीजी महाराज के सच्चे दास – चहेते सुपात्र! जब से गुरुहरि योगीजी महाराज प.पू. पप्पाजी के जीवन में आए, मानो तब से प.पू. पप्पाजी सतत् इनके प्रकाश रूप ही वर्ते और योगीजी महाराज के संबंध वालों की सेवा में ही जीवन की धन्यता मानी... जीवन का परमपद माना।

स्वामिनारायण संप्रदाय में अज्ञान व संकुचितता के सीमित दायरे के कारण बहनों के भगवान भजने के लिए ऐसा कोई प्रबंध नहीं था। गुरुहरि योगीजी महाराज ने इस भगीरथ व नए कार्य को कराने के लिए प.पू. काकाजी - प.पू. पप्पाजी को चुना।

प.पू. काकाजी ने अगुआई ली और बहनों के इस कार्य का प्रारंभ कराया... तत्कालीन तेजोद्वेषियों के बहकावे में आए अज्ञानी व रूढ़िवादियों से उन्होंने

भयंकर अपमान झेला। फिर भी, वे ढाल बन कर संरक्षक ही रहे और प.पू. पप्पाजी की छत्रछाया में बहनों का यह कार्य पनपा!

प.पू. काकाजी तो कहते भी कि–

पप्पाजी थे, तो ही मैंने यह कार्य उठाने की हिम्मत करी!

वाकई, आध्यात्मिकता की एक अनोखी अद्‌भुत सूझ देने – नई क्षितिज खोलने ही गुरुहरि योगीजी महाराज इन दोनों भाईयों को अक्षरधाम से साथ में ही लाए थे। प.पू. पप्पाजी में नए-पुराने सभी को गुणातीत अवस्था का मूर्तिमान दर्शन होता था। उनकी एकमात्र चाहना थी कि बहनें भी ऐसे एकांतिक भाव को पाएं और चार पंखुड़ी का एक आध्यात्मिक समाज तैयार हो।

मानो हमारे हठ, मान, ईर्ष्या के रोगों को जड़ से टालने ही उनका धरती पर प्राकट्य था! सो, उनका जन्म व कर्म दोनों ही सनातन व दिव्य है। आज भी उनके लीलाचरित्रों में दिव्यता से व अहोभाव से यदि हम लय और लीन रहेंगे, तो स्थूल रूप से भी उनकी कमी महसूस नहीं होगी। आज भी हमारे आस-पास – हमारे भीतर उनकी खुश्बू महसूस करेंगे।

ऐसे गुणातीत स्वरूपों की हमारे प्रति की अनहद् करूणा, प्रीति, लाड़-प्यार व हमारे चैतन्य की परवरिश के ऋण को तो हम कभी चुका ही नहीं सकते; लेकिन... उनके स्मरण व वचन में निरंतर रहें – वही हमारी सच्ची भक्ति कही जाए - आराधना कही जाए।

प.पू. पप्पाजी के गुणगान गाने की सेवा व उनके चरित्र का मूल्याकंन हम सबने अपनी-अपनी कक्षा के मुताबिक जरुर किया है। पर, प.पू. पप्पाजी के कार्य को समझने हमारी बुद्धि की इंची पट्‌टी खूब छोटी ही नहीं, बल्कि व्यर्थ ही है। परंतु अब उन्हें मिले हुए और उनकी प्रसन्नता पाए हुए संतों-मुक्तों के साथ अंतर का संबंध दृढ़ करके उन्हें जितना फॉलो करेंगे, उतना हम परम पूज्य पप्पाजी को तत्त्व से पहचान पाएंगे – पप्पाजी को पा लेंगे।

तो, आइए १९७१ में प.पू. पप्पाजी द्वारा करी गई निम्न कथावार्ता को **१ सितंबर** – उनके **प्राकट्य दिन** निमित्त पढ़ें और इसी दिशा में अग्रसर हों...

'...ये अलग ही प्रकार की ज्ञानशिविर है। हम यहाँ जितने भी इकट्‌ठे हुए हैं, उन सभी को भगवान के होकर, भगवान के लिए ही जितना जिया जाए – उतना जीना है। यह हमारा मूल हेतु है। इसके सिवा हमें और कुछ करना ही नहीं है। इसके अलावा और तरीके का जीवन हमें जीना ही नहीं है। हमारी देह, इन्द्रियाँ और अंतःकरण अक्षरधाम के नियम से वर्तते हो जाएं, उसकी क़वायद लेने की यह शिविर है। **पू. बापा के लिए जीवन कुर्बान कर देना ही है**-यह हमारा लक्ष्य है। **ऐसे सभी मुक्त यहाँ इकट्‌ठे हुए हैं।** फिर भी – हर एक के सुख लेने में फर्क है। यूं सुख भोगने की भिन्नता वाले हम मुक्त इकट्‌ठे हुए हैं। हर एक के अपने-अपने अंग, मान्यता व समझदारी के कारण एवं मुताबिक यह भिन्नता है; लेकिन वफादारी तो बापा के प्रति की ही है। **मैं, ठाकुर और क्रिया ही देखा करने की यह बात है। ऐसे लक्ष्य वाले हम सभी इकट्‌ठे हुए हैं।** हम अपने आप कहेंगे या दूसरे हमारे लिए कहेंगे कि यह अक्षरधाम का सुख भोगता है, इससे कुछ बरकत होने वाली नहीं है। हमें अपने मन के भीतर ही पूछना पड़ेगा कि मैं कितने घंटे सुख भोगता हूँ? कहाँ और कब अक्षरधाम का सुख चला जाता है? और वह हम ही जान पाएंगे। अंग की भिन्नता के मुताबिक यह भिन्न होता है।

इसलिए, **अंग की भिन्नता से परे होकर गुणातीत एकता में जाने के लिए यह शिविर है।** मेरा तंत्र, मेरी क्रिया और मेरे स्पंदन मुझे नोट करने हैं-दूसरों के नहीं। इस बात को नज़र में रख कर जीना है। **इस प्रकार के**

तीसरे तबके में हम सरलता से कैसे जा सकें इसके लिए यह शिविर है।

शिविर में हर एक अपनी रीति से बापा में कैसे डूबे रहना – यह सीखेगा। अपने अंग के मुताबिक ले लें-ग्रहण कर लें। भिन्न अंग वाले का चुभ जाए वहाँ अंतर्दृष्टि करें-प्रार्थना करें। **दरअसल तो हमारे अंग का जो अहंकार हमें है, वह टालने के लिए हम इकट्ठे हुए हैं।** दूसरे की समझदारी गलत लगे, दूसरे का कुछ भी चुभे-उस अभिप्राय की गाँठ बांधने से पहले-उसे बाहर लाने से पहले हम अंतर्दृष्टि करें। हमारे समकक्ष मुक्तों का जो चुभता है – अंगभेद के कारण चुभता है – उसे वाचा देने से पहले अंतर्दृष्टि करके प्रार्थना करें। ***'मेरा ही दोष है'*** – यह मानने का प्रयत्न करें तो सामने वाले का जो होना होगा वह होगा, लेकिन हमें जो चुभता है – वह तो बापा टाल ही देंगे। इसे कहा जाए **'आध्यात्मिक समता'** ! **यह एकांतिक का सुहृद्भाव है।** हम से जो छोटे होंगे, उनका नहीं चुभेगा; क्योंकि भीतर में हमें यूं होगा कि यह मुझे मानता तो है ना? हम से जो बड़े होगें, उन्हें पूज्य मानते होंगे इसलिए उनका भी चुभेगा नहीं। लेकिन समकक्षा वाले का चुभेगा – बुरा लगेगा और वहीं अंतर्दृष्टि करके ***'स्वामी-स्वामी'*** करना है।

कम से कम परेशानी झेल कर सुख-सुख से प्रगति करने की यह बात करता हूँ। **सभी अंग पिघल जाने के बाद चैतन्य का रास ही देखने की यह बात है।** इस प्रकार की समझ से शुरु कर देंगे, तो जल्द से जल्द पार आ जाएगा। **भेद में अभेदभाव आ जाएगा। हम जहाँ भी होंगे, साक्षात् का प्रगटपन वहाँ माना जाएगा।** परेशानी, विक्षेप, अभाव में ना टिकें और सुहृद्भाव के सिद्धांत से वर्त सकें वही हमारी माँग है। महाराज और स्वामी सभी को इस तरीके की सूझ दे दें यही प्रार्थना है!'

– प.पू. पप्पाजी महाराज, १९७१

✡✡✡

'ताड़देव की गतिविधियाँ'

पिछले वर्ष के मई महीने से अब के मार्च तक प.पू. गुरुजी लगातार मानो 'ऑन व्हील' रहे। प.पू. काकाजी-प.पू. पप्पाजी द्वारा पनप रहे नूतन दिव्य परिवार की परवरिश करने की उन्हें इतनी उमंग है कि समय-समय पर भक्ति अदा करने वे अपनी देह की परवाह किए बिना दिन-रात लगे रहते हैं। प्रभुस्वरूप संत में प्रभु की शक्ति कार्य कर ही रही होती है, सो वे देह के भाव से तो परे ही होते हैं। फिर भी मानव देह धारण करी है, सो उस देह में बदलाव आना भी स्वाभाविक है ही। यूं, २५ मार्च '०७ को गुरुहरि पप्पाजी की मूर्तिप्रतिष्ठा उत्सव के बाद अप्रैल महीने से प.पू. गुरुजी की तबियत नरम-गरम रहने लगी... डायाबीटीज़ एकदम बढ़ गई और थोड़ा-सा चलने पर ही हार्ट प्रॉब्लम के कारण वे थकान महसूस करते। अतः मई-जून में होने वाले वार्षिक जपयज्ञ **'अनुष्ठान शिविर' के समय में थोड़ा बदलाव किया गया।** हर वर्ष प्रातः साढ़े छः से सवा आठ बजे तक धुन-भजन-कथावार्ता का प्रोग्राम करते थे; वह अबकी बार प.पू. गुरुजी के स्वास्थ्य को देखते हुए **सायं ७:१५ से ९:०० बजे तक का रखा गया...** मुक्तों को सत्संग की कैसी गरज है कि कईयों के तो पहले से 'जपयज्ञ' का समय पूछने के लिए फोन ही आने शुरु हो गए... पर, सभी मुक्तों ने इस बदलाव का सहर्ष स्वीकार किया।

विशिष्ट अतिथि के रूप में **राजकोट के** हमारे आत्मीय स्वजन **प.भ. रामजीभाई मवाणी**, हाल ही में अशोकविहार क्षेत्र से विजयी हुए **निगम पार्षद श्री देवराजजी**, हमारे **पू. मल्कानी अंकल** एवं **पू. आर. एन. बंसल साहेब** ने मिल कर दीप प्रज्वलित करके १२ मई '०७ शनिवार की सायं से जपयज्ञ-'अनुष्ठान शिविर' का

मंगल प्रारंभ करवाया...

प.पू. गुरुजी अबकी बार शिविर में नीम के वृक्ष के नीचे बनी बैठक में झूले पर बैठ कर सब को निराले रूप में दर्शन देते रहे... इतना भक्तिमय वातावरण देख कर – शाम का सारा नज़ारा ऐसा लगता था, मानो अपना एक अलग छोटा-सा गाँव बसा हो। मन में एक विचार सहज ही आता रहता है कि सच में हम सब कितने भाग्यशाली कि ऐसे प्रभुधारक संत हमारे लिए कितने गरजु-इतने सस्ते बने?

जपयज्ञ की शुरुआत में सर्वप्रथम आवाह्न श्लोक के बाद आधा घंटा **'स्वामिनारायण महामंत्र'** की धुन और धुन के पश्चात् 'गोडी' का एक पद और एक-दो भजन गाने के पश्चात् कथावार्ता का लाभ मिलता। प.पू. गुरुजी ने बताया कि अबकी बार सोमवार से शुक्रवार तक 'स्वामी की बातें' पढ़ेंगे और शनिवार व रविवार को प.पू. काकाजी महाराज की परावाणी का लाभ लेंगे।

१२ मई को शनिवार होने के कारण प.पू. काकाजी महाराज की परावाणी का सभी ने लाभ लिया। वह गुजराती भाषा में होने के कारण प.पू. गुरुजी उसका हिन्दी करके अत्यंत सरल भाषा में खूब विस्तृत रूप से-बारीकी से समझाते... 'श्रवण, मनन, निदिध्यासन' स्तंभ द्वारा दूर-सुदूर बैठे सभी मुमुक्षुओं को इस से लाभान्वित करने का अल्प प्रयास कर रहे हैं...

✡✡✡

'श्रवण, मनन, निदिध्यासन'

* 'कथावार्ता' ध्यान से सुनेंगे तो ही उसे जीवन में ला पाएंगे।
* प.पू. साहेब ने 'प.पू. पप्पाजी मूर्तिप्रतिष्ठा उत्सव' में एक खूब रहस्य की-मर्म की बात करी। भगवान स्वामिनारायण ने अपने साथ गुणातीत को लाकर सारे साधना मार्ग पर सेरे लगा दिए हैं। पहले की तरह हरिद्वार चले जाओ, गुफाओं में बैठो, हिमालय की चट्टानों पर जाकर एक टाँग पर खड़े रह कर तपस्या, हठयोग, वगैरह करो–ये सारा साधनाक्रम अब आऊटडॅटेड हो गया है। **अब तो बस भगवान अखंड रखे ऐसे संत जो कहें वो करते रहो और उसके संबंध वालों में 'निर्दोषभाव'** रख कर पड़े रहो यानि–सत्संग में पड़े रहो। **पड़े रहने का मतलब कि–सत्संग में किसी के दोष को भी मत देखो...** फलां ऐसा है, फलां वैसा है; ये वो करता है, ऐसा तो नहीं करना चाहिए वगैरह ना करें... पर हम यही धंधे करते रहते हैं।

  मूल अक्षरमूर्ति गुणातीतानंदस्वामिजी ने अपनी बातों में कहा है कि–

  सुखपाल में बैठ कर दूध, मिश्री, चावल खाकर आनंद करते-करते भगवान भजो। कोई तकलीफ नहीं-कोई रिगरस तपस्या नहीं!

  प.पू. पप्पाजी अलग ढंग से कहते कि–

  ब्यूक गाड़ी और ताजमहल होटल में रह कर भगवान भजो।

  प.पू. काकाजी कहते कि–

  लिहज़त (आसानी) से सब काम हो जाए...
* किसी की टीका के लिए नहीं, पर समझाने के लिए बात करता हूँ कि अपने यहाँ दूसरे आश्रमों जैसा नहीं है कि एक ज्योति खूब चमकी, पर फिर उसके बुझ जाने के बाद आश्रम बिल्कुल सुनसान हो जाए या समाज से रॅपर्ट बनाए रखने के लिए उसे समाज सेवा में डाईवर्ट होना पड़े...

  स्वामिनारायण संप्रदाय में गुणातीत संत द्वारा ये हाईरारकी अखंडित-जीवंत रही है। **स्वामिनारायण संप्रदाय में हर एक जगह पर गुणातीत विभूति**

की सेरेछाया में 'सत्संग' हरियाला (लाईव) लगेगा।

* प.पू. साहेब ने एक और बहुत अच्छी बात समझाई कि पहले बैलगाड़ी में जाते थे, फिर टांगा हुआ, फिर गाड़ियाँ हुईं... और अब गाड़ियों में भी ऐसी सुविधा हो गई कि चार-चार, छः-छः घंटे तक हम 'बाई कार' जाएं तो भी थकान नहीं लगेगी। ऐसी कम्फर्टेबल कॉम्प्यूटराईइड सीट्स बनी हैं – जो कि एडजस्ट होकर हम से सॅट हो जाती हैं। पहले तो खूब थकान लगती थी। यूं – जैसे सायन्स में डॅवलप्मेन्ट हुई है, उसी तरह **स्पीरीच्युआलीटी में भी भगवान स्वामिनारायण ने ऐसी एड्वांस्मेन्ट करी है जिससे कि मोस्ट कम्फर्टेबली हमारी साधना होती रहे... पर ये बात हमारे दिमाग में बैठती ही नहीं है।** सो, हम अपना दिमाग लगाते रहते हैं कि नहीं-नहीं, इतना तो करना ही पड़े... भला ऐसे थोड़े भगवान मिल जाते हैं? पर प.पू. काकाजी कहते कि हमें भगवान तो मिल गए हैं, बस अब उन्हें प्रसन्न करके पा लेने हैं!
* व्रत इत्यादि भी यदि संत की आज्ञा से करेंगे तो उसका फल अलग-सा मिलेगा। व्रत वगैरह क्यों करते हैं? भगवान व संत को राजी करने के लिए। तो, यदि संत कह दें कि आज खाना खा लो; पर, तब हम ये आग्रह रखें कि नहीं, मेरा तो व्रत है – तो जरुर मानना कि हमें संत से अधिक अपने व्रत-साधन का प्रभाव है... **'संत मोक्ष का दाता है'** – वो माना नहीं गया। **हमने ऐसा ही माना ना कि मेरे व्रत से मेरा मोक्ष होने वाला है...**
* आध्यात्मिकता यानि – मन के साथ सीधी लड़ाई... प्रकृति के साथ लड़ाई... मन कहे कि ये करना है, वो हमें नहीं ही करना है। **मन का कहा मानना ही नहीं है।** प.पू. काकाजी कहते कि मुझे शूरवीर लोग पसंद हैं... मन-स्वभाव से लड़ाई लेना – यह कमजोर लोगों का काम ही नहीं है। **हम** उल्टा करते हैं; **मन से कॉम्प्रोमाईज़ करते रहते हैं और मुक्तों के साथ अड़ जाते हैं...** इसके बजाय मन से अड़ जाना चाहिए कि मुझे किसी का दोष नहीं देखना-मतलब, नहीं देखना है।
* कोई कहता है कि हमें सत्संग करना है, **तो 'सत्संग' ये करना है कि किसी का दोष नहीं देखना...** हम तो मंदिर आते हैं तो शुरु हो जाते हैं कि यहाँ तो फलां का ज्यादा रखा जाता है... गुजरातीयों का ज्यादा रखते हैं वगैरह... पर **हम संत के होकर कितना जीते हैं, पहले वह तो अपने भीतर झाँक कर देखें।**
* प.पू. साहेब बोले कि – यदि संबंध वाले मुक्तों के प्रति 'निर्दोषभाव' रखेंगे तो सब कुछ मिल जाएगा। फलां ऐसा, फलां वैसा, यहाँ तो ऐसा चलता है वगैरह में सड़ते ना रहो। **जब तक अपने दिमाग में ये कीड़ा होगा तब तक महाराज जानबूझ कर ऐसे प्रसंग लगातार खड़े करते रहेंगे जिससे कि हमें लगेगा कि हमें एवॉईड किया जाता है, हमें तो निग्लॅक्ट करा जाता है।** लेकिन, **हम यदि तीन-चार बार भी अपने मन की इन बातों को यूं ठुकरा देंगे कि संत जो करते हैं, वो मेरे हित में ही कर रहे हैं; तो फिर मन अपने पर हावी नहीं हो पाएगा।**
* हम अपने मन की गाँठे छोड़ेंगे, तो महाराज प्रतीति कराएंगे और हम सुखी होंगे। पर, अपनी ज़िद्द पकड़े रखेंगे तो जिदंगीभर दुःखी रहेंगे... **प्रसंगों का सिलसिला चलता ही रहेगा।**
* बौद्धिक मूल्यांकन रख कर यदि सत्संग में हम मुक्तों के दोष देखते ही रहेंगे, गलत चर्चा-भक्तों की झंझट करते रहेंगे तो **जैसे कम्प्यूटर में एक गलत बटन दबाने से सारा डेटा ईरेझ हो जाता है, वैसे ही हमारी करी हुई सारी सेवा पर पानी फिर जाएगा।**
* हम यदि अपने आपको दिल की सच्चाई से 'कमजोर'

मानें और भजन का एकमात्र सहारा लें, तो प्रभु हमें इस रास्ते चलने का खूब बल दे देते हैं। लेकिन **हम खुद को कमजोर मानने की बजाय – अपनी कसर का स्वीकार करने के बजाय मुक्तों पर 'दादागीरी' - रौफ झाड़ने के मौके ढूंढते रहते हैं।**

* प.पू. काकाजी हमेशा एक बात कहते कि तुम पाँच तो कम से कम एक होकर-एक दूसरे के स्वभाव जँचा कर वर्तो।
* प.पू. काकाजी पहले से इस निशान पर लगे हुए थे कि बापा ने हमें संस्था से जो अलग किया है, वह बहुत सारे मंदिर बनाने, समाज सेवा या अन्य प्रवृत्तियाँ करने के लिए नहीं, **बल्कि स्पीरीच्युअल टॅक्नीशियन्स तैयार करने हमें अलग किया है।**
* स्पीरीच्युअल टॅक्नीशियन्स तैयार होने के लिए एक ही समझ पकड़े रखनी पड़ती है कि **सब कुछ प्रभु ही कर रहे हैं। मेरे आस-पास सब कुछ प्रत्यक्ष स्वरूप ही कर रहे हैं।** वो मानने की कोशिश सिन्सियरली करेंगे तो प्रभु प्रतीति भी कराएंगे कि सब कुछ मैं ही कर रहा हूँ। हम फिर ऑथेन्टीसिटी से दूसरों को भी कह पाएंगे कि– ***'तू डर मत, सब कुछ महाराज कर रहे हैं।'***
* हम चालाकी से – कलाकारी से दूसरों से जुड़े सेवकों को अपनी ओर खींच लेने की चेष्टा कभी ना करें और ना ही कॉर्नरींग भी रखें।

प.पू. साहेब के हैं, तब भी हमारे हैं।
प.पू. स्वामिजी के हैं, तब भी हमारे हैं।
विद्यानगर के हैं, तब भी हमारे हैं।
मुंबई के हैं, तब भी हमारे हैं
और
हम सभी के हैं!

ये बात अगर हमारे दिल में सच्चाई से होगी, तो ही सामने आए मुक्त को वह टच करेगी। यदि शिष्टाचार से होगा-दिखावा होगा, तो सामने वाले के दिल को छू नहीं पाएगी।

दूसरों का बीहॅव देख कर भी हमें कभी रीएक्शन में नहीं जाना है।

ज्ञान सिर्फ बोलने में नहीं, पर **दिल की सच्चाई से जीने में जारी रखेंगे, तो ही हमारी कामयाबी, हमारी प्रगति, हमारा इन्डिवीज्युअल विकास होता जाएगा।**

* प.पू. काकाजी कई बार कहते थे कि हम सत्पुरुष की बात आज नहीं मानेंगे, तो आगे जाकर आने वाला समाज मनवाएगा कि ये तुम क्यों नहीं कर रहे हो? महाराज संजोग ऐसे खड़े कर देंगे कि हमें मजबूर होकर – लाचार होकर करना ही पड़ेगा।
* गुरुहरि योगीजी महाराज एक बात कहते कि साधु को 'वन-वे ट्राफिक' ही होता है कि अगर देना है, तो आशीर्वाद दे-राजी हो; पर उसे नाराज होने का अधिकार ही नहीं है।

दिल से जो नाराज हो वो 'साधु' ही नहीं है।

* आध्यात्मिकता का गणित एकदम अलग है। उसे बुद्धि से समझा ही नहीं जा सकता। कोई फॉर्म्यूला इसे नहीं समझा पाएगा। **वहाँ ऐसे आर्षदृष्टा संत का हमें भरोसा-विश्वास रखना पड़ेगा कि इन्हें कोई स्वार्थ नहीं कि वो हमें उलटी पट्टी पढ़ाएं।**
* प.भ. मल्कानी अंकल ने थोड़े दिन पहले मुझे एक बहुत अच्छा सॅन्टॅन्स भेजा था कि **ट्रयु वॅल्यू ऑफ यॉर वॅल्थ इज़ व्हेन यू लूझ यॉर एन्टायर वॅल्थ।** मतलब – तुम्हारी वेल्थ क्या है, वो तब पता लगता है, **जब तुम्हारी सारी जायदाद चली जाए और तब भी तुम्हारी जो वॅल्यू रहती है – धॅट इज़ यॉर रियल वॅल्थ।**

१९५४ में मैं जब सत्संग में आया, तब सोनावाला बिल्डिंग्स-ताड़देव के कॉम्प्लॅक्स में टोटल १५ गाड़ियाँ खड़ी रहती। जिसमें से १४ गाड़ियाँ प.पू. काकाजी की थीं और एक किसी और व्यक्ति की! यानि – पूरे

एस्टेट में एक ही और व्यक्ति गाड़ी वाला था – शायद सुरेश पटेल, सेन्ट्रल ऑटोमोबाईल्स वाला। जो मस्ती, निश्चिंतता, हास्य प.पू. काकाजी के चेहरे पर तब था, वैसी ही मस्ती जब प.पू. काकाजी के पास एक भी गाड़ी नहीं रही थी, तब भी बनी रही थी! हमने प.पू. काकाजी को दादर – अक्षरभुवन के सामने वाले बस स्टॅन्ड से बस में चढ़ते - उतरते देखा है। बस की लाईन में भी प.पू. काकाजी इतनी ही मस्ती से खड़े रहते। एक बार प.पू. काकाजी के पुराने ड्राईवर शंकर ने जब उन्हें बस स्टॅन्ड पर क्यू में देखा, तो वो रो पड़ा कि हमारा सेठ आज बस में? पर प.पू. काकाजी के मुँह पर कोई फर्क नहीं पड़ा था, क्योंकि वे जानते थे कि **भले ही सब कुछ चला गया, पर असली वॅल्थ – योगीजी महाराज तो मेरे पास हैं।**

हम सब यह बोलते जरुर हैं, पर मौके पर यह महिमा स्थिर नहीं रहती।

हमें तो थोड़ा - सा बुखार आ जाने पर या इन्कम टॅक्स की एक नोटिस आ जाने पर सैंकड़ों विचार आ जाते हैं कि क्या होगा, कैसे होगा? अत्यधिक डिस्टर्ब हो जाते हैं।

* एक ओर प.पू. काकाजी का एग्री ओरियन्ट का केस जोर - शोर से चल रहा था; जेल जाने की नौबत भी आई थी; पर, रोज शाम को प.पू. काकाजी कपोलवाड़ी में – सत्संग में इतनी ही मस्ती से आते कि किसी को पता तक नहीं चलता कि प.पू. काकाजी कितने मुश्किल दौर से गुजर रहे हैं...
* हम ऐसे गुणातीत पुरुषों के जोग में आ गए हैं, सो वे हमारी पूर्णाहुति करवा कर ही छोड़ेंगे... प.पू. पप्पाजी के शब्दों में – सिर्फ चोईस हमारी है कि हँसते - हँसते करना है, हँसते - रोते करना है या रोते - रोते करना है।
* किसी भक्त की मत्थापच्ची - झंझट में पड़ेंगे, तो हमारा फ्यूज़ उड़ने वाला ही है।

चातुर्मास के नियम...

(26 जुलाई 2007, गुरुवार से
21 नवंबर 2007, बुधवार तक)

1. जिन्हें सुविधा हो वे – शाम की धुन व कथा में मंदिर आएं। जो ना आ पाएं वे अपने घर पर सुबह 20 मिनिट धुन व सायं आरती के बाद 20 मिनिट धुन अचूक करें।
2. प.पू. काकाजी की 'पुष्प समाधि' की रोज 31 प्रदक्षिणा करें। जो रोज ना आ पाएं वे चातुर्मास के दौरान जब भी मंदिर आएं तब 51 प्रदक्षिणा कर जाएं।
3. सावन के महीने यानि – 13 अगस्त से 11 सितंबर तक एक बारी भोजन लें।
4. 26 जुलाई – नियम की एकादशी,
   4 सितंबर – जन्माष्टमी,
   23 सितंबर – जलझीलनी एकादशी,
   21 नवंबर – कार्तिक शुक्ला एकादशी
   – इन चारों दिन व्रत रखें।
5. चातुर्मास दौरान मंदिर में यथाशक्ति महापूजा करवाएं।
6. अवतार पुरुषों व भगवत्स्वरुप संतों की जीवनी एवं वचनामृत, ब्रह्मविद्या, पत्र संजीवनी, ब्रह्मप्रवाह व मोती बिखरे चौक में जैसे अध्यात्मग्रंथों एवं 'भगवत् कृपा' के मननीय लेखों का रोज नियम से अध्ययन करें या आधा घंटा संतों की परावाणी टेप - सी.डी. द्वारा सुनें या तो वीडियो द्वारा दर्शन व कथा का लाभ लें।
7. रोज सुबह या सायं चालीस मिनिट तेज़ वॉकिंग करें।
8. परिवार में एवं सत्संगिओं में संप - सुहृद्‌भाव - एकता से मिलजुल कर काम - सेवा करने की आदत डालना और उस हेतु प्रगट प्रभु से बल माँगने **सुबह उठ कर फ्रेश होकर ऐसे मुक्तों को याद करके दस मिनिट प्राणिक जाप करें।**
9. सप्ताह में समय निकाल कर एक बार किसी भी सत्संगी के घर उन्हें मिलने - करने, धुन - भजन करने, खबर देखने, कोई कार्य में हाथ बटोरने जाना।

भजन

(राग– अगर तुम मिल जाओ, ज़माना छोड़ देंगे हम...)

प्रभु वश हो जाएं, सरल मुक्तों के पास हों हम -३
तेरा संबंध ही देखें, अब अपनी सोच छोड़ें हम,
प्रभु वश हो जाएं, सरल मुक्तों के पास हों हम -२।।

बने बंसी तेरी हम तो, तेरा ही सुर सुनाई दे, -२
मुक्तों की क्रियाओं में, तेरी लीला ही दिखाई दे,
निर्दोष उनको हम मानें, ओऽऽ ओ....
निर्दोष उनको हम मानें, निर्दोष हो जाएंगे हम।
प्रभु वश हो जाएं, सरल मुक्तों के पास हों हम।।

मानव योनि से महामानव की योनि में चले जाएं, -२
भजन और प्रार्थना से, अंतर की मूर्ति को हिलाएं,
एकता ही एकांतिक धर्म, ओऽऽ ओ....
एकता ही एकांतिक धर्म, लक्ष्य यही अपना बना लें हम
प्रभु वश हो जाएं, सरल मुक्तों के पास हों हम।।

काकाजी से वफ़ादारी, तुम्हारे जैसी सीखें हम, -२
स्मरण मूर्ति का करके ही, हर एक क्रिया करें आरंभ,
प्रगट प्रभु को राजी करना, ओऽऽ ओ....
प्रगट प्रभु को राजी करना, हमारा हो वही उद्यम।

प्रभु वश हो जाएं, सरल मुक्तों के पास हों हम
तेरा संबंध ही देखें, अब अपनी सोच छोड़ें हम,
प्रभु वश हो जाएं, सरल मुक्तों के पास हों हम...।। -२

❋ ❋ ❋

व्रतोत्सवसूची

(1) दि. 26.7.2007, गुरुवार — देवशयनी एकादशी – व्रत, चातुर्मास प्रारंभ

(2) दि. 29.7.2007, रविवार — **गुरुपूर्णिमा**
सुबह 9:00 से 12:00 ताड़देव मंदिर में महापूजा एवं
सत्संग सभा – दोपहर 12:30 बजे प्रसाद...

(3) दि. 9.8.2007, गुरुवार — एकादशी – व्रत

(4) दि. 13.8.2007, सोमवार — श्रावण महीना प्रारंभ

(5) दि. 15.8.2007, बुधवार — भारत का स्वातंत्र्य दिन

(6) दि. 24.8.2007, शुक्रवार — पवित्रा एकादशी – व्रत
(ठाकुरजी को पवित्रा के हार पहनाने।)

(7) दि. 28.8.2007, मंगलवार — **श्रावणी पूर्णिमा – राखी**
सुबह 8:00 से 10:00 प.पू. गुरुजी की निश्रा में सच्चा रक्षाकवच प्राप्त करने प्रार्थना करेंगे।

(8) दि. 1.9.2007, शनिवार — नाग पंचमी
ब्रह्मस्वरूप प.पू. पप्पाजी का प्रागट्य दिन

(9) दि. 2.9.2007, रविवार — रांधण छठ (षष्ठी)

(10) दि. 3.9.2007, सोमवार — शीतला सातम (सप्तमी)

(11) दि. 4.9.2007, मंगलवार — जन्माष्टमी – व्रत

(12) दि. 7.9.2007, शुक्रवार — एकादशी – व्रत

(13) दि. 15.9.2007, शनिवार — गणेश चतुर्थी

R.N.I. 28971/ 77
Air Mail
'**Bhagwatkripa**' Bimonthly Magazine
Despatched on 15th of alternate months
If undelivered please return to :—
Printer, Publisher, Editor :—
SHRI PRABHAKER RAO *FOR* YOGI DIVINE SOCIETY- DELHI
'Taad-dev', Kakaji Lane, Swaminarayan Marg,
Ashok Vihar-III, Delhi-110 052 (India)
Tel.: 2730 1327
Printed at : **Delux Offset Printers**
308/4, Shahzadabagh, Opp. Rohtak Road,
Daya Basti, Delhi

TO,